Golden Research Thoughts
Volume 2, Issue. 12, June. 2013
ISSN:-2231-5063
Available online at www.lbp.world

ORIGINAL ARTICLE

स्वामी विवेकानंद का सार्वभौम धर्म एक समीक्षात्मक अध्ययन

ज्योति कुमारी
शोध छात्रा, दर्शनशास्त्र विभाग, तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर ।

भारत की पवित्र भूमि पर समय समय पर अनेक संत महात्मा विचारक एवं महापुरूषों का अवतरण होता आया है, उन्ही महापुरूषो में एक नाम स्वामी विवेकानंद का भी है जिन्होनें अपने विचारों एवं दर्शन से न केवल भारतीयों को प्रभावित किया अपितु सम्पूर्ण जनमानस को अपना अनुरागी बना लिया।

विवेकानंद का मानना था कि धर्म भारत के लोगों के जीवन का आधार है परंतु उनका यह भी विचार था कि – जब तक लोगों के दुःख दर्द और गरीबी को दूर नही किया जाता, जब तक उन्हें धर्म का उपदेश देना व्यर्थ है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार सर्वोच्च धर्म मानवता की सेवा है हम सभी मनुष्य परस्पर प्रेम और सेवा की भावना से जुड़े हुए हैं । यही हमारा वास्तविक संबंध है। वैसे धर्म का परित्याग कर देना चाहिए जो हमें रोटी नहीं दे सकता है। हमें धर्म के इसी वास्तविक स्वरूप को समझना होगा। इसलिए उन्होने दीन – दुःखी असहाय और पीड़ित मानवता की सेवा को ही असली धर्म और सच्ची ईश्वर सेवा माना है उन्होंने समाज में व्याप्त बुराईयों एवं कुरितियों का अध्ययन किया और पाया की इन बुराइयों का कारण मनुष्य में आध्यात्मिक मूल्यों का घोर अभाव है। अतः उन्होने समय की मांग के अनुरूप आध्यात्मिक जागरण अनिवार्य समझा । उन्होंने पाया कि वर्तमान समय में जहाँ धर्म व्याप्त है उसका मूल स्वरूप कहीं धूमिल हो चुका है और उसमें अनेक बुराईया व्याप्त हो चुकी है । वह प्रेम और उदारता की जगह धर्मांधता और रूढ़ीवादी परम्परा को जन्म देती है वे स्पष्ट शब्दो में कहते है :– '' मैं एक ऐसे धर्म का प्रचार करना चाहता हूँ जो सब प्रकार की मानसिक अवस्था वाले लोगों के लिये, उपयोगी है '' जो समाज में समानता , कुव्यवस्था एवं बुराईयों को दूर कर लोगो के आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख करें। इस क्रांतिकारी परिवर्तन लाने हेतु युवा वर्ग का आवाह्यन करते हुए कहा – ''उठो जागो और स्वयं जागकर औरों को जगाओ अपने जन्म को सफल करो, और तबतक रूको नही जबतक कि लक्ष्य प्राप्त न हो जाए''।

स्वामी विवेकानंद के विचारों से आत्मत्याग ही सर्वोच्च धर्म है। धर्म की उत्पति प्रखर आत्मत्याग से होती है अपने लिए कुछ भी मत कर, सब दूसरो के लिए करो , पवित्र और निःस्वार्थ बनने की कोशिश करना, सारा धर्म इसी में है। धर्म का रहस्य आचरण से कहा जा सकता है। निःस्वार्थता ही धर्म की कसौटी। धर्म मनुष्य के सामाजिक जीवन को नियंत्रित करता है।

धर्म का अर्थ अध्यात्म को जागृत करना है– धर्म अपने अंदर ईश्वर को जगाना है। यहाँ आध्यात्मिक कहने का अर्थ है – इन्द्रिय और बुद्धि से परे जाने की चेष्ठा। धर्म में सामाजिकता का अंश भी रहता है और यह नैतिकता को सशक्त आधार भी प्रदान करता है।

'' स्वामी विवेकानंद ने धर्म को दिशा – निर्देश देने वाली शक्ति के रूप में माना और कहा कि धर्म जीवन का अनिवार्य पक्ष है धर्म वह शक्ति है जो पशु को मनुष्य तक और मनुष्य को परमात्मा तक उठा सकता है।'' विवेकानन्द जी ने धर्म सबंधी सभी संकीर्णता को दूर करते हुए कहते है कि कोई भी मनुष्य किसी धर्म में जन्म नही लेता बल्कि उसका धर्म तो उसकी आत्मा में ही सन्निहित होता है और यह बात इस सीमा तक सत्य है कि चाहकर भी मनुष्य धर्म का त्याग तब तक नहीं कर सकता, जब

तक उसका शरीर है, मन, मस्तिष्क और जीवन है,जब तक मनुष्य में सोचने ,विचारनें की शक्ति रहेगी तब तक यह संघर्ष चलता रहेगा और तब तक किसी न किसी रूप धर्म रहेगा हीं। उन्होनें स्पष्ट शब्दों में कहा है '' धर्म सम्पूर्ण मनुष्य में परिव्याप्त है न केवल वर्तमान मे अपितु भूत एवं भविष्य में भी। महाभारत में भी 'धर्म की परिभाषा देते हुए कहा गया है जिस प्रकार अग्नि का स्वभाव जलाना, पानी का स्वभाव, भिगोना हवा का स्वभाव सुखाना है उसी प्रकार धर्म मनुष्य का स्वभाव है जो उससे पृथक नही हो सकता ।

कुछ धर्मालम्बियों का विचार है की उनका धर्म श्रेष्ठ एवं अन्य तुच्छ। इसपर स्वामी जी का कहना है कि वस्तुतः हर धर्म सार्वभौम है। धर्म का मूलमंत्र स्वीकृति जो सभी धर्मों में विद्यमान समान बिदुं है ईश्वर परम शुभ है। अतः सभी धर्मों का सम्मान करना चाहिए । धार्मिक जीवन चाहे हिन्दू महात्मा का हों या बुद्ध या ईसा का सभी धार्मिक जीवन यही कहता है कि हमें घृणा और हिंसा का सामना प्रेम और अहिंसा के द्वारा करना चाहिए। धार्मिक जीवन का लक्ष्य हीं होता है अपने साथी, पड़ोसी तथा सम्पूर्ण मानव के प्रति सेवा एवं प्रेम का भाव प्रदर्शित करना।

विभिन्न प्रचलित धर्मों के बाह्य स्वरूप को देखे तो प्रत्येक धर्म में तीन प्रमुख पहलू मिलेगे : –

1. प्रत्येक धर्म का अपना दर्शन होता है,
2. उसके अंदर कुछ देव–संबंधी कहानियाँ होती है और
3. इसके अंदर पूजा पाठ आदि कुछ विधि–विधान एवं रश्में होती है।

अतः दूसरें शब्दों में प्रत्येक धर्मों को अपने – अपने दर्शन विधि एवं रीति – रिवाज होते है। जो वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों ,अभिरूचियों एवं प्रवृतियाँ के अनुरूप होते हैं। ऐसी परिस्थिति में समस्त विश्व में एक धर्म की बात करना बिल्कुल असंभव मालूम पड़ता है। यह कदापि संभव नही की विभिन्न परिस्थितियों में रहने वाले लोग एक ही प्रकार के धार्मिक विधि – विधानों रिवाजों का पालन करे। कोई एक धर्म कभी भी विश्व के समस्त मनुष्य की भावनाओं को संतुष्ट नहीं कर सकता। इसप्रकार संसार की विविधता कों देखते हुए ये बातें संभव मालूम नहीं पड़ती है कि किसी एक धर्म को विश्व धर्म बनाया जाए। विवेकानंद के अनुसार ऐसा होना भी नही चाहिए अगर ऐसा होगा तो फिर मनुष्य की अपनी विशिष्टता ही समाप्त हो जाएगी। प्रत्येक मनुष्य में अपने–अपने ढ़ग से सोचने–समझने की शक्ति है और प्रत्येक की अपनी–अपनी अभिरूचि एवं इच्छाएँ हैं। इसलिए धर्मो की विभिन्नता मनुष्य के विचार एवं उनकी भावनाओ की विविधता का द्योतक है ।

इस प्रकार कोई धर्म अन्य धर्मो से तुच्छ नहीं है। वेद, पुराण, गीता, बाइबिल, कुरान सभी ईश्वरीय वाणी है। अतः हमें आवश्यकता है कि विभिन्न धर्मो के ज्ञान वर्धक बातो को ग्रहण करने हेतु अपने हृदय के द्धारों को सदैव खुले रखने की। इस प्रकार वे विश्वधर्म के संबंध में बात कर धर्म के मौलिक स्वरूप की बात करते है कि इसके लिए अलग से किसी से कोई विश्वधर्म की आवश्यकता ही नहीं है। यदि सभी अपने–अपने धर्मो के मौलिक स्वरूप से अवगत हो जाए तो विश्व धर्म तो एक वास्तविकता है। उसकी संभावना की कोई आवश्यकता नही। उनके धर्मो में निहित एवं विश्व–धर्म है। सभी धर्मो में निहित एक ही सत्य है जिसे अभिव्यक्त अलग–अलग धर्म अलग–अलग रूपों मे करते हैं। धर्मो की विविद्यता वाह्य रूप में है आंतरिक रूप में नहीं। एक ही ईश्वर विभिन्न धर्मो में ठीक उसी प्रकार मौजूद है जिस प्रकार अनेक मोतियों के अंदर एक ही धागा सबो को एक साथ सम्मिलित किए रहता है। इसी तरह किसी भवन को यदि हम अलग–अलग दिशाओं से देखे तो वे चित्र एक–दूसरे से बिल्कुल अलग–अलग होंगे परन्तु अलग–अलग चित्र होते हुए भी वे सभी चित्र एक ही भवन के हैं। फिर अलग–अलग बर्तनों में रखा गया पानी, अलग–अलग आकार का होते हुए भी वास्तव में जल हीं है। इसी प्रकार अलग–अलग दृष्टिकोण से देखने के कारण ईश्वर हमे अलग–अलग हीं दिखते हैं परंतु वास्तव में सभी धर्मों में एक ही ईश्वर व्याप्त हैं।

उपर्युक्त विचारो द्धारा विवेकानंद धर्म की कोई नयी परिभाषा नही दी है अपितु धर्म को देखने का नया नजरिया प्रस्तुत किया है जो धार्मिक समस्याओं के समाधान में बहुत हीं कारगर प्रतीत होता है। अपने ऐसी उदार एवं उन्नत विचारों से ही उन्होंने सम्पूर्ण जनमानस को मंत्रमुग्ध कर दिया था।

अतः सभी धर्मो की वास्तविकता इसी में निहित है कि सभी अपने – अपने धर्म में हीं रहे। किसी ईसाई को हिन्दू और किसी हिन्दू को ईसाइ नहीं बनना है। यदि सचमुच में संसार के सभी धर्म के लोग अपने – अपने धर्मो को पालन यदि इस प्रकार से करे कि सभी धर्म पूर्णतः एक है, उसका भेद बाह्य है तो फिर एक सार्वभौम धर्म (विश्व धर्म) नही होते हुए भी संसार में विश्वव्याप्त (सार्वभौम) होगा । इसप्रकार विवेकानंद किसी एक धर्म को विश्व – धर्म की बात नकारते है और एक ही धर्म को समस्त मानव जाति पर लादने की प्रवृति को वे मानव प्रवृति के विरूद्ध बात करते हैं और कहते हैं किसी भी धर्म का ईमानदारी से पालन करने पर मनुष्य अपने आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है। हिन्दू धर्म मे वेदों के जमाने से लेकर इस बात पर जोर दिया गया है कि एक हीं ईश्वर अनेकों रूपो में देखा जाता है। हिन्दू धर्म की इसी विशाल हृदय का तथा उसके विश्वव्यापी दृष्टिकोण को देखते हुए विवेकानंद का झुकाव हिन्दू धर्म में दिखता है और खासकर अद्वैत वेदांत के प्रति ज्यादा क्योंकि यह अद्वैत के सिद्धांत पर खड़ा है। इसका किसी से विरोध नही है। यह धर्म सभी धर्मो का आदर करता है। यह युक्तिसंगत धर्म है। स्वामी जी धर्म का आधार प्रेम, भाईचारा , सहानुभूति , दया एवं सहस्तित्व की भावना को मानते है जो मनुष्य के आध्यात्मिक उन्नति के लिए सहयोग के रूप में है और यही सनातन हिन्दू धर्म के व्यापक उद्देश्य में निहित है। सनातन हिन्दू धर्म हीं एक मात्र ऐसा धर्म है जिसमें समुचे मनुष्य जाति के लिए कल्याण की भावना है और इस मानवतावादी धर्म का विश्व में कोई विकल्प नही है। इसमें सहयोग एवं सहअस्तित्व की भावना पर जोर दिया गया है जो बुराईयों को मिटा कर समस्त मानवता को एक धरातल पर ला खड़ा करती है।

इस प्रकार स्वामी विवेकानंद विश्व–धर्म की बात करते हुए अद्धैत–वेदांत के प्रति अपनी झुकाव को प्रस्तुत करते हैं परंतु वे किसी एक धर्म को विश्व–धर्म माननें की जगह सार्वभौम धर्म का प्रतिपादन करतें हैं जो धर्मों की मौलिक एकता पर बल देता है । विवेकानंद की सार्वभौम धर्म का संदेश वर्तमान परिस्थिति के अनुकूल है जिसके अनुसार लोगों को न तो अपनें धर्म को त्यागने और न हीं दूसरे के धर्म को अपनाने की आवश्यकता है। उन्हें केवल अपनें धर्म के बंधन को तोड़कर अन्य धर्मों के प्रति स्वीकृत के भाव को अपनानें की आवश्कता है जिससे सदियों से चले आ रहे धार्मिक भेदभाव समाप्त होगा। इस प्रकार उनका धार्मिक उपदेश सम्पूर्ण मानवता के लिए वरदान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(1) समकालीन भारतीय दर्शन – बी0 के0 लाल (एम. टी. बी. टी.)
(2) प्रारंभिक समाज एवं राजनीतिक दर्शन – प्रो0 अशोक कुमार वर्मा
(3) हिन्दू धर्म – स्वामी विवेकानंद
(4) विवेकानंद साहित्य , तृतीय खण्ड
(5) विवेकानंद का जीवन और सार्वभौम सिद्धांत, रोमा–रोला